Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233

Year-2 | Continuous issue-8 | September-October 2013

अशोक वाजपेयी की कविताओं में 'माँ'

हिन्दी की समकालीन कविता में अशोक वाजपेयीजी का नाम आदर के साथ लिया जाता है। सन् 1966 में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित एवं सन् 1995 राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित 'आविन्यो' कविता-संग्रह में माँ पर लिखी गई ककविताएँ 'आसन्नप्रसवा माँ', 'माँ', 'लौटकर जब आउँगा', 'मौत की ट्रेन में दीदीआ' और 'दिवंगत माँ के नाम पत्र' हैं। उनके पहले कविता-संग्रह 'शहर अब भी संभावना है' में माँ पर लिखी गई बेजोड़, लाजवाब कविताएँ हैं।

"माँ का दूध अमूल्य है।
इस दूध का ऋण हिन्दुस्तान को,
बेचकर भी नहीं चुकाया जा सकता है,
ऐसी माँ किसी मुनि महात्मा से कम पूजनीय नहीं है।"(तरुणसागर के प्रवचन से उद्धत)

उपरोक्त पंक्तियाँ भी कवि अशोकजी की कविताओं में माँ के प्रति प्रेम की सार्थक अनुभूति हमें कराती है। 'शहर अब भी संभावना है' ककविता-संग्रह की वि'आसन्नप्रसवा माँ' कविता में तीन गीत हैं - एक 'काँच के टुकड़े', 'जीवित जल' और 'जन्मकथा'। प्रथम गीत में माँ को एक काँच के समान सुरक्षित बताया है। जैसे सूर्य की करुणा होती है, उसी तरह माँ की करुणा और रोशनी आज सुरक्षित है। यहाँ कवि ने काँच के टुकड़े को प्रतीक के रूप में लिया है। कवि यह कहना चाहता है कि माँ की पीड़ा और करुणा में काँच के टुकड़ों-सी क्षणभंगुरता और सूर्य की सनातनता दोनों निहित है।

"क्योंकि तुम्ही अपनी खिड़की के
आठों काँच सुरक्षित हैं।"[1]

दूसरा गीत 'जीवित जल' संवाद शैली में है। इस गीत में कवि अपनी आसन्नप्रसवा माँ और प्रकृति की तुलना की है। माँ को प्रकृति की तरह स्वस्थ, सुन्दर और ताज़गीपूर्ण बताया है। वह अलसायी है, धूप से तप्त और झरने के मीठे कलरव के समान है। कवि उस भरी-पूरी प्रकृति की पृष्ठभूमि में अपनी माँ की पूर्णता देखता है और देखकर आत्मतुष्ट होता है। अंत में यह कविता हमें अनायास ही कालिदास, भास और अज्ञेय की अर्थछटाएँ हृदय में उभार देती है। जैसे –

"तुम्हारी बाँहें ऋतुओं की तरह युवा है"[2]

तीसरा गीत 'जन्मकथा' है। इसमें कवि माँ से कहता है कि माँ! तुम्हारे होंठों पर अपने शिशु के कंधे का हल्का-सा प्रभाव महसूस होता है। और उँगलियों के पास उसकी छोटी उँगली का स्पर्श है। हे माँ! जिस तरह बीज अपने आप से उगकर बड़ा होता जाता है। उसी तरह तुम स्वयं बार-बार उगती हो। इसीलिए माँ मैं तुम्हारी कोख से जन्मा हूँ। मेरी जन्मकथा नई है।

"तुम कितनी बार स्वयं से ही उग आती हो"[3]

उक्त तीनों गीतों में कवि ने तटस्थ भाव से अपनी आसन्नप्रसवा माँ को गौरवान्वित करते हुए व्यापक रूप से मातृत्व का गौरव किया है। सगर्भा स्त्री के सौंदर्य का वर्णन करना भारतीय परंपरा है। 'सूर्य की करुणा तुम्हारे मुँडेरों पर बरस जाती है' ऋग्वेदीय उषा-सूक्त का नया आधुनिक रूप है।

'माँ' कविता में कवि माँ के मातृप्रेम को व्यक्त किया है। कवि कहते हैं कि कैसी भी भयावह रात हो, अपमान और भय माँ भले रखती हो, किन्तु अपने बच्चे का अहसास होते ही उनके जीवन से कूरूपताएँ दूर हो जाती हैं। अपने बच्चे देख और पाकर वह पुलकित ही नहीं होती, अपने जीवनको सार्थक और संपूर्ण समझती है।

"और तुम्हारा हृदय
एक प्रार्थना-सा उनकी ओर बढ़ने लगता है
भोर होने के बहुत पहले
तुम्हारी दैनिक भोर होती है।"[4]

'लौटकर जब आऊँगा' माँ पर लिखी गई रचना में संवाद-शैली का प्रयोग किया है। कवि अपनी माँ को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे माँ! जब मैं लौटकर आऊँगा (यात्रा से), मैं कहूँगा कि मैं उन गुफाओं से लौटकर आया हूँ। यहाँ भूखे, नंगे, प्यासे लोग दिन-भर जलते रहते गिद्धों और चीलों के भयावह चीत्कारों के बीच माँ तुम्हारा प्रिय गीत 'रघुपति-राघव राजा राम' गाऊँगा यहाँ आकर के तुम्हें आश्वासन दूँगा, हे माँ ! तुम खुश हो जाओगी। तुम्हें जिस चीज़ की प्रतीक्षा थी वह व्यक्ति आ गया, क्योंकि मैंने घोड़ों पर सवार एक भव्य अवतारी पुरुष को देखा है यहाँ आकर यह कहूँगा कि –

"- क्या मैं लौटूँगा
अपनी निर्जल आँखों में अपमान भरे
जो अब हर रास्ते पर छाया है
आकाश की तरह"[5]

हे माँ! मैं जब लौटूँगा तो शून्य आँखों में अपमान भरे रहूँगा और चारों ओर फैला हुआ। हे माँ! जब मैं यात्रा से लौटकर आऊँगा तो तुम मेरे चेहरे को पहचान पाओगी। न मेरे पास खिलौने होंगे, जिस तरह अक्सर लोग आते हैं। उसी तरह लौटकर नहीं आऊँगा। खाली हाथ थकान और मिठाई लेकर आऊँगा।

'दिवंगत माँ के नाम पत्र' रचना कवि ने अपनी माँ के नाम पत्र-आकार में लिखी है। भावनाएँ वही हैं, माँ के प्रति प्रेम और आत्मग्लानि। इसमें एक ऐसा बेटा, जो अपनी माँ के देहान्त के वक्त उसके पास मौजूद नहीं होता है। उसकी माँ को पत्र लिख रहा है और उसकी ग्लानि इस पत्र में तो है, किन्तु माँ के प्रति जो प्रेम व्यक्त हुआ है वह वाकई लाजवाब है।

कवि अपनी माँ को कहता है कि माँ मैं तुम्हारे अंतिम क्षणों पर तुम्हारे पास नहीं पहुँच पाया, क्योंकि दुनियादारी के व्यर्थ कामकाज में उलझा हुआ था और उसीमें देरी हो गई। मैं तुम्हारे पास तुम्हारी मृत्यु के वक्त तो नहीं पहुँच पाया, किन्तु मुझे पता नहीं है कि तुमने मृत्यु के समय जब अन्य चीजों से विदा ली थीं तब मेरे अनुपस्थित होने के बावजूद मुझसे विदा लेना तुम्हें याद था कि नहीं था। मुझे ऐसा लगता है कि तुमने मुझे उस वक्त जरूर याद किया होगा मैं जानता हूँ माँ कि जीवन ने तुम्हें बहुत अपमानित किया है, किन्तु केन्सर के परिणाम स्वरूप मृत्यु ने भी तुम्हारी लाज कहाँ रखी। इसने भी तुम्हें बहुत अपमानित किया होगा, किन्तु क्या तुम अपना अपमान और हम लोगों के लिए मोह अपने मन में लिए हुए इसी देश में भटक रही हो? मैं यहाँ ईश्वर के घर में सूनसान बैठा अपनी पवित्रता में सोच रहा हूँ कि क्या मृत्यु के बाद जिस लोक में व्यक्ति जाता है वहाँ अपमान का चेहरा बदल जाता है। या वह और ज्यादा कलुषित और घनीभूत हो जाता है और हमारे अस्तित्व पर बार-बार चोट करता है। समझ नहींनहीं पा रहा हूँ बैठा-बैठा सोच रहा हूँ कि किस तरह पानी से कोई दाग छूटकर बह जाता है या और ज्यादा कठोर अपमान की कालिख गाढ़ी होकर हमारे अस्तित्व से चिपक जाती है।

कविता की अगली पंक्तियों में कवि अपने निवास-स्थान का परिचय देता है कि माँ, मैं जहाँ रह रहा हूँ वह एक छोटा-सा मोहल्ला है। यहाँ के लोग एक-दूसरे की मदद करते हैं। यहाँ दूध में असावधानी से उफान आ जाता है तो सब्जी में जरूरत-भर को नमक पड़ जाता है। यहाँ के लोग धर्मालु हैं। भोजन के पहले ईश्वर को वे धन्यवाद देते हैं कि उसने उन्हें भोजन मुहैया करवाया। अपने-अपने पवित्र ग्रंथों को हाथ लगाते हैं। अपने कुत्तों को सुबह-शाम बाहर घुमाने के लिए ले जाते हैं, किन्तु तुम यहाँ नहीं हो क्योंकि यहाँ परदेश है। यह परदेश होते हुए ऐसा लगता है कि यह भी वह गोपालगंज है। वही बकौली-कठचंदनवाला गोपालगंज है। जहाँ मेरा जन्म हुआ था, जहाँ तुम मौजूद हो और यहाँ का कुआँ है, जो वह भी ऐसा लगता है कि गोपालगंजवाले हमारे घर के अंदर ही स्थित है जिस तरह हम बैठकर नहाया करते थे और तुम नहलाया करती थी। तुम तो हमें पानी से ज्यादा अपने लाड़-प्यार से नहलाया करती थी।

किन्तु माँ, तुम्हारी मृत्यु के बाद हमें गोपालगंजवाला यह मकान छोड़ देना पड़ा, खाली कर देना पड़ा। वह मोहल्ला क्यों छोड़ा? उस मोहल्ले के रहनेवाले लोग छोटे, उसकी गंजे छोटी। उसके अंधेरे और उजाले सब कुछ हमारी ज़िन्दगी से चले गये। उसके साथ ही चला गया हम लोगों का बचपन, हमारा लड़कपन। तुम्हारा वहाँ का जीवन हमारे बड़े होने के बाद जो हरसिंगार हमारे आँगन में झरता वह भी हम से छूट गया। लम्बे काका के साथ कई किलो थोक सब्जी ढोना भी हम से छूट गया। सुबह-सुबह बाजार जाना और कभी-कभी गुस्से में काका को भोजन की थाली को झन्नाकर फेंक देना – यह स्मृतियाँ हो जाती थीं और उसके साथ पूरे घर का भयभीत हो जाना। भयभीत हो जाने

के बाद तुम्हारा चेहरा शान्त रह गया, न वह गली, न वे मोहल्ले, न वहाँ के लोग, न वहाँ के अंधेरे-उजाले, सुख न दु:ख, न स्मृतियाँ सब कुछ हमारे हाथ से तुम्हारी मृत्यु के पश्चात् चली गयीं। और तब बिलकुल कहीं और जहाँ है इस मठ के प्राचीन आँगन में धीरे-धीरे स्मरण के आधार पर लौटता है। ऐसा लगता है कि उसके छुटे हुए पच्चीस या तीस बरस नहीं, कई शताब्दियाँ गुज़र गयी हैं, किन्तु हमारी स्मृतियों से अदृश्य नहीं हुई है माँ। कभी-कभी ऐसा लगता है कि तुम यहाँ उस गली के मुहाने पर दीखने लगी हो। ऐसा लग रहा है कि गली के उस परा से वृंदावन के मंदिर से लौट रही हो या नलिनी जयवन्त की कोई फिल्म देखकर लौट रही हो। अभी तुम लौटोगी यहाँ ताँगा रुकेगा, उससे कोई मेहमान उतरेंगे। तुम मेहमानों के स्वागत के लिए जल्दी-जल्दी घर में गयी हो और उनके लिए चाय रख आयी हो। मुझसे कह रही हो कि जा ईश्वर की सख्त अभेद्य प्राचीर वहाँ से खुल जाता है ऐसा लगता है। तुम्हारा भंडार और पूजा घर और उस भंडार में अनाज दाल आदि के भरे कन्स्तर के पास एक आले में लटके हैं तुम्हारे भगवान। और सामने रामचरितमानस की भाषा तुम्हारी प्रार्थना के रूप में गुनगुनाहट मौज़ूद है जो भयभीत होकर गूँज रहा है और मैं यहाँ एक बूढ़े मठ में अकेला बैठा हुआ हूँ मैं तुम्हारा बड़ा बेटा, जो अधेड़ कवि हो चुका है जिसकी अधेड़ आयु में तुम्हारी भी आयु जुड़ी हुई है। जिसके समय में तुम्हारा समय जुड़ा हुआ है। जिसके रक्त में तुम्हारा रक्त मिला हुआ है। जिसकी आत्मा के अंधेरे में तुम्हारा वक्षस्थल उजाले के रूप में मौज़ूद है। वह मैं एक बूढ़ा कवि यहाँ अकेला बैठा हुआ है।

इसके आगे की पंक्तियाँ बड़ी भाववाही हो गई हैं। यह पवित्रता मुझ पर बलात झुक रही है। यह निर्जनता भी अन्तर्ध्वनित है, जो वंदना से अपने आप में सम्पुटित होकर एक पुष्प की तरह समर्पित है। दूर पहाड़ियों पर पूजाघर की घाटियों का नाद इन सबको तुम्हारा नाम देता हूँ। यहाँ उल्लेख योग्य है कि कवि अशोक अपनी माँ को दीदीआ कहते थे –

"अनंत में जहाँ तुम हो
पितरों के जनाकीर्ण पड़ोस में
वही अपने ढीले पेण्ट को सम्हालता
मैं भी हूँ गुड्डुन
जैसे यहाँ इस असंभव सुनसान में तुम हो
इस कविता, इन शब्दों, इस याद की तरह
दीदीआ..."[6]

अशोकजी की माँ पर लिखी कई कविताओं में माँ को आदर्शीकृत भावात्मक ऊँचाई से नीचे लाकर वस्तुस्थिति से जोड़ते हुए सामान्य धरातल पर जटिल संरचना में ढाल दिया है। माँ अपने जीवन-क्रम में नियमित है। दु:ख झेलती है। वह चुप रहती है। चुप्पी उसका निर्वेद है। आसन्नप्रसवा माँ के लिए लिखा गया गीत में कवि का भावात्मक धरातल है। इसमें माँ की अवस्थिति की एक पुरुष-पुत्र द्वारा की गई नारीवादी चौखटों में बंद दिखलाया है।

संदर्भ:::

1. अशोक वाजपेयी, 'शहर अब भी संभावना है', पृ. 1
2. अशोक वाजपेयी, 'शहर अब भी संभावना है', पृ.1
3. अशोक वाजपेयी, 'शहर अब भी संभावना है', पृ. 3
4. अशोक वाजपेयी, 'शहर अब भी संभावना है', पृ. 5
5. अशोक वाजपेयी, 'शहर अब भी संभावना है', पृ. 7
6. अशोक वाजपेयी, अशोक वाजपेयी, 'आविन्यो', पृ. 43

****

डॉ. अमृत प्रजापति
गवर्मेन्ट आर्ट्ए एण्ड कॉमर्स कॉलेज, कडोली
(हिन्दी विभागाध्यक्ष)
ता. हिम्मतनगर, जि. साबरकांठा

Copyright © 2012 - 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat